International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

वोट - बैंक की राजनीति और हमारा लोकतंत्र

डॉ. ओम प्रकाश यादव

राजनीति विज्ञान विभाग (जय प्रकाश विश्वविधालय, छपरा)

Email- prakash83mirganj@gmail.com

भारतीय लोकतंत्र की एक विशेषता यह भी है कि राजनीतिक दल प्राइवेट लिमिटेड कंपनियों की तरह चलते हैं। ऐसे में राजनीतिक दलों के नेताओं के अपने - अपने स्वार्थ टकराते हैं। चूँकि वे अलग - अलग सामाजिक आधारों के होते हैं, तो यह स्वाभाविक भी है। सामाजिक समीकरणों के आधार पर चलने वाले राजनीतिक दलों के सामाजिक स्वार्थ होते है और वे व्यक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्त होते हैं।

भारत में औपनिवेशिक दौर में और उसके बाद के शुरूआती दशको में जाति को आधार बनाकर परिवर्तनकारी राजनीति करने की कोशिशे हुई। अम्बेडकर ने दलितों में राजनीतिक चेतना भरने की पुरजोर कोशिश की। दक्षिण भारत में रामास्वामी नायकर पेरियार के नेतृत्व में ब्राह्मण विरोधी आन्दोलन चला। इसी तरह राम मनोहर लोहिया ने पिछड़ो की राजनीतिक गोलबंदी करके कांग्रेस और ऊँची जातियों के वर्चस्व को तोड़ने की कोशिश की। लेकिन उसके बावजूद सामान्यतः जाति और राजनीति के आपसी संबंधो को संदेह की नजर से देखा जाता रहा है। राजनीति में जातिवाद की शिकायत करते हुए अक्सर इसे हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए खतरा माना जाता है। आमतौर पर लोकतांत्रिक राजनीति को आधुनिकता और जाति को परंपरा का प्रतीक मानते हुए दोनों के विरोधाभासपूर्ण संबंधो पर जोर देने की प्रवृति रही है।

वोट-बैंक की राजनीति में जाति की भूमिका

वोट-बैंक की लोकतांत्रिक राजनीति में जाति की भूमिका को समझने की कोशिश सन साठ के दशक में शुरू हुई। प्रसिद्ध समाजशास्त्री मॉरिस जोन्स ने 1964 ई. में लिखी अपनी पुस्तक में यह माना कि स्वतंत्र भारत की नई परिस्थितियों के कारण राजनीति जाति के लिए तथा जाति राजनीति के लिए महत्वपूर्ण हो गई है। इसी तरह रुडोल्फ और सुजेन एच. रुडोल्फ ने 1967 में प्रकाशित अपनी पुस्तक में यह माना कि आधुनिक लोकतांत्रिक

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

व्यवस्था में जाति एक पारंपरिक संरचना है, लेकिन आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था में उसका आधुनिकीकरण हो गया है। उन्होंने बताया की राजनीति में भागीदारी के जरिए जाति का लोकतांत्रिक पुनर्जन्म हुआ है।

जाति आधारित वोट-बैंक की राजनीति पर समाजशास्त्री रजनी कोठारी का वक्तव्य भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका और इसके प्रभावों को बताने मे रजनी कोठारी ने सबसे महत्वपूर्ण योगदान दिया है। 1970 ई. में प्रकाशित कोठारी की किताब 'पॉलिटिक्स इन इंडिया' तथा इसी वर्ष कोठारी द्वारा सम्पादित किताब 'कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स' ने अदभुत प्रतिभा के साथ यह बताया की जातियां आधुनिक राजनीति में भागीदारी करने के दौरान किस तरह समाज परिवर्तन की प्रक्रिया को अंजाम दे रही है। कोठारी के अनुसार यह एक तथ्य है कि राजनीति गोलबंदी करने के लिए और अपनी स्थिति मजबूत करने के लिए पहले से मौजूद और उभरती हुई निष्ठाओ को इस्तेमाल करती है खासतौर पर जनआधारित राजनीति में जनसमर्थन संगठनों के जरिए व्यक्त होता है संगठन के जरिए ही विशाल जनसमूह गोलबंद होते है। एक सामाजिक संस्था के रूप में जाति की जड़े हमारे समाज में बहुत गहरी है। एक व्यकित सामान्यतः अपनी जाति कि सीमाओं के भीतर जन्म लेता है, जीवन गुजारता है और इसी सीमा में उसकी मौत भी होती है। दुसरे व्यवसायिक संगठन इतने सशक्त नहीं है कि वे व्यकित को सुरक्षा, पहचान, सहभागिता एवं स्वहित का बोध प्रदान करे। कोठारी का यह मत है कि इस रूप में वोट-बैंक की लोकतांत्रिक राजनीति में जाति और राजनीति एक-दुसरे के नजदीक आती है। इस प्रकिया में दोनों का ही रूप बदला है। अपने संगठन के दायरे में लाकर राजनीति ने जाति से अपनी अभिव्यक्ति के लिए सामग्री प्राप्त की है तथा इसे अपनी योग्तानुसार ढाल लिया है। दूसरी तरफ विभिन्न जाति - समूहों ने राजनीति को अपनी गतिविधि का केंद्र बनाकर अस्मिता का दावा पेश करने और राज्य-तंत्र में अपनी स्थिति सुधारने का मौका हासिल किया। वोट - बैक की लोकतांत्रिक राजनीति ने विभिन्न जातियों के बीच गठबंधन की प्रवृति को बढाया है। वोट - बैंक की राजनीति के कारण नयी उपलब्धियों की संभावनाएं जगी। इन संभावनाओ के साथ यह बात भी जुडी हुई थी कि केवल जातिगत संबंध स्थायी समर्थन का आधार बनाने के लिय नाकाफी ही नहीं वरन् हानिकारक भी होते है। इसका कारण यह है कि सिर्फ एक जाति के समर्थन से सत्ता हासिल करना संभव नही है इसके लिए दूसरी जातियों और समुदायों के समर्थन की आवश्यकता भी पड़ती है। प्रो. कोठारी ने स्पष्ट तौर पर यह बताया है कि सत्ता पर कब्ज़ा करने के लिए विभिन्न जातियों के बीच बनने वाले गठबंधन ने पारंपरिक रूप से कर्मकांड पर

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

आधारित अथवा ऊँच - नीच कायम रखने वाली जाति -व्यवस्था को समस्तरीय एवं प्रतियोगी जाति व्यवस्था में तब्दील कर दिया है। ऐसे में पिछड़ी और दलित जातियों ने भी सत्ता पर समान रूप से दावेदारी पेश की है तथा वे सत्ता पर अपना कब्ज़ा करने में कामयाब भी रही है।

वोट-बैंक की रजनीति बिहार राज्य के संदर्भ में :-

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बिहार में वोट-बैंक की राजनीति को निम्नलिखित तीन चरणों में बाँट कर देखा जा सकता है –

(1). आजादी के बाद से 1967 तक का दौर :-

इस चरण में मुख्य रूप से अगड़ी वर्चस्वशाली जातियों का बोलबाला रहा। आजादी के बाद 1967 तक बिहार की सत्ता की राजनीति और आर्थिक लाभों का संघर्ष सामाजिक श्रेणीक्रम में ऊपर बैठी जातियों तक ही सीमित था। जातियां जनसंख्या के लिहाज से बहुत छोटी थी परन्तु सामजिक और आर्थिक हैसियत की नजरिये से काफी मजबूत थी। ये वे लोग थे, जिन्होंने आगे बढकर शैक्षणिक अवसरों को लपका था। प्रारंभिक दौर में जातीय - गोलबंदी बहुत गहरी नही थी। ऐसा राष्ट्रीय आन्दोलन के मूल्यों के प्रभाव और जाति - आधारित होड़ कम होने के कारण था। जाति आधारित होड़ कम होने का कारण यह था कि पिछड़ी जातियों की आर्थिक स्थिति अच्छी नही थी। फिर भी सत्ता कि राजनीति में ऊँची जातियों (भूमिहार ,राजपूत, ब्राहमण और कायस्थ) में होड़ लगी रहती थी।

(2) 1967 से 1990 तक का दौरा :-

इस दौर में पिछड़ी जातियों में राजनीतिक चेतना बढी । जैसे- जैसे वोट-बैंक की राजनीति ने अपना नया तेवर दिखाना शुरू किया ऊँची जाति समूहो के प्रभुत्व को चुनौती मिलनी शुरू हो गई। आजादी के बाद के शुरूआती दशको में हुई भूमि- सुधारो का फायदा यादव ,कुर्मी और कोइरी जैसे जातियों को मिला। इससे कई पिछड़ी जातियां या कुलक उभर कर सामने आने लगे | 1967 तक सत्ता में इनकी भागदारी काफी हद तक बढी । इसके लिए मुख्य तौर पर तीन कारण जिम्मेवार थे - प्रथम, ऊँची जाति के नेताओ की सत्ता के लिए आपसी प्रतियोगिता काफी तेज हो गई। ऐसे में अपना जनाधार बढ़ाने के लिय उन्होंने पिछड़ी जाति के नेताओ को अपने से जोड़ा | द्वितीय, समाजवादियो विशेषकर लोहियावादियों ने पिछड़ी जातियों में राजनीतिक जागरूकता उत्पन्न कर एव

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

उनमे एकता लाकर उची जातियों के वर्चस्व को तोड़ने की रणनीति अपनाई । इससे पिछड़ी जातियों की राजनीतिक चेतना बढ़ी | तृतीय , पिछड़ी जातियों के एक हिस्से (यादव ,कोइरी ,कुर्मी ,बनिया आदि) को आधे - अधूरे मन से लागु किए गये भूमि -सुधारो और शिक्षा का फायदा मिला । इससे इनमे अपने राजनीतिक अधिकारो के प्रति सजगता बढ़ी। 1967 तक बिहार की रजनीति में पिछड़ी जातियों के नेताओं की उपस्थिति महत्वपूर्ण रूप से दर्ज होने लगी। 1977 के विधानासभा चुनाव के बाद बिहार विधान सभा में पिछड़ी जातियों के विधायको की संख्या बढ़ गई। पिछड़ी जाति के नेता कर्पूरी ठाकुर राज्य के मुख्यमंत्री बने।

(3). राजनीति के मंडलीकरण का दौर :-

इसने बिहार में वोट -बैंक की राजनीति को पिछड़ी जातियों के वर्चस्व के साथ पूरी तरह स्थापित कर दिया। 1977 के विधानसभा चुनाव के बाद कर्पूरी ठाकुर के कार्यकाल में बिहार में पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण का मसला खुलकर सामने आ गया । 1978 में ही बिहार में कर्पूरी ठाकुर सरकार ने अन्य पिछड़ी जातियों (ओबीसी) के लिए आरक्षण लागु कर दिया था। राज्य में ऊँची जाति के लोगो ने इसका खुलकर विरोध किया। इससे आरक्षण मसले पर पिछडो में एकजुटता बढी। फिर भी, पिछड़ी जातियों की राजनीतिक चेतना जगाने और उन्हें ऊँची जातियों के खिलाफ गोलबंद करने के संदर्भ में 1990 में वी. पी. सिंह सरकार द्वारा मंडल आयोग की सिफारिशों को लागू करने के फैसले ने सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । मंडल आयोग की सिफारिशो के लागू होने के बाद ऊँची जातियों द्वारा इसका तीखा विरोध हुआ। इसने बिहार की राजनीति को सामाजिक रूप से अगड़े - पिछडो में बाँट दिया। फायदा उठाने के लिए राजनीतिक रूप से कुशल नेतृत्व की जरूरत थी। लालू प्रसाद यादव ने इस कमी को पूरा किया। अपने तीखी ऊँची जाति विरोधी अंदाज से लालू ने पिछड़ो की अस्मिता के सवाल को मुख्य मुद्दा बना दिया। इससे पिछड़ो और दलितो का एक बड़ा हिस्सा लालू के साथ जुड़ गया जिससे लालू प्रसाद की राजनीतिक स्थिति काफी मजबूत हुई। पिछडो की रजनीतिक चेतना और आगे बढी जब एक अन्य पिछड़ी जाति (कुर्मी) के नेता नितीश कुमार ने यादव वर्चस्व के खिलाफ विद्रोह कर दिया। पिछड़ों में रजनीतिक चेतना और सत्ता की आकांक्षा बढ़ने का नतीजा यह निकला की बिहार की राजनीति में उंची जातियों की वर्चस्वशाली भूमिका पीछे चली गई। अब वे पिछड़ी जातियों की सहायक मात्र रह गई। बिहार का नेतृत्व अब पूर्ण रूप से पिछड़ी जातियों के हाथों में चला गया।

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

उपरोक्त विश्लेषण से यह साफ होता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से वोट -बैंक की राजनीति ने लोकतंत्र को काफी हद तक प्रभावित किया है। 1990 के बाद राज्यों की राजनीति में लोक लुभावनवादी मुहावरों का प्रयोग बढ़ा है वह वोट-बैंक की राजनीति का ही देन है। वोट- बैंक की राजनीति ने वर्षो से चली आ रही अगडों की वर्चस्व को समाप्त कर पिछड़ों के लिए सत्ता का मार्ग प्रशस्त किया।

संदर्भ सूची-

1. अभय कुमार दूबे (सं.), राजनीति की किताब : रजनी कोठारी का कृतित्व, वाणी प्रकाशन , सीएसडीएस, नई दिल्ली.
2. रामाश्रय राय 'कास्ट एण्ड पॉलिटिकल रिक्रुटमेंट इन बिहार' संकलित रजनी कठोरी, काष्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स, ओरियंट लांगमैन, दिल्ली 1970.
3. श्रीकांत, राज और समाज, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2011.
4. योगेन्द्र यादव , 'कायापलट की कहानी : नया प्रयोग, नयी संभावनाएं, नए, अंदेशे'
5. अभय कुमार दुबे (सं.) लोकतंत्र के सात अध्याय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2002.
6. सुरेन्द्र किशोर, 'लालू प्रसाद जिन पर महानता थोप दी गई' सामायिक वार्ता जून 2005, दिल्ली